पात्र-परिचय

पुरुष—

१—सूत्रधार	नाटक-अभिनेताक अध्यक्ष।
२—पारिपार्श्व	सूत्रधारक सहायक।
३—विदूषक	सूत्रधारक सहायक।
४—श्रीकृष्ण	द्वारकाधीश, नायकक पिता।
५—महेन्द्र	देवराज।
६—बृहस्पति	देवगुरु।
७—प्रद्युम्न	नायक, श्रीकृष्णक पुत्र।
८—गद	श्रीकृष्णक रनुज, नटवेषधारी।
९—साम्ब	प्रद्युम्नक अनुज, नटवेषधारी।
१०—ज्यौतिषी	धूर्त्त, मूर्ख।
११—हंस (शुचिमुख)	संवादवाहक।
१२—वज्रनाभ	दैत्यराज, प्रभावतीक पिता।
१३—सुनाभ	वज्रनाभक भाय।
१४—रक्षक	दैत्यराजक अनुचर।

स्त्री—

१—नटी	सूत्रधारक पत्नी।
२—प्रभावती	नायिका, वज्रनाभक पुत्री।
३—चन्द्रवती	सुनाभक पुत्री, प्रभावतीक सखी।
४—गुणवती	सुनाभक पुत्री, प्रभावतीक सखी।
५—हंसी (शुचिमुखी)	दूती, नायक-नायिकाक मिलन करओ-निहारि।

श्रीगणेशाय नमः

भानुनाथ-दैवज्ञ-विरचितम

प्रभावतीहरणम्

मङ्गलगीतम् सं० --१

जय जय त्रिभुवन-सुन्दरि भगवति !
कृत-बहुविध वर रूपे ।
सिन्दुरपूर रुचिर तुअ अम्बर
त्रिनयन-वलित अनूपे ॥ हे जय ॥ ध्रु० ॥
अरुण-सरोरुह-निहित[1] चरण-युग
विहित-बाल-शशि भाले ।
ललित चतुर्भुज[2] कलित अभय वर
पुस्तक विरचित माले ॥
तरुण वयस, शिशु-दिनकर[3] रुचि तनु
सतत पुरित मुख हासे ।
सुरगुरु सुरपति दुहुहुँ तुलित भेल
जे जन तुअ-पद-दासे ॥
त्वरित दुरितचय भार निकन्दिनि[4]
रचित मनोरम हारे ।
परम करम उपगत रह जे जन
तनिक परम सुखसारे ॥

गीत सं०—१

१—लाल कमल पर राखल। २—चारू भुजामे अभय, वरदान, पोथी ओ माला शोभित छनि। ३—बाल-सूर्य (उदयकालीन)। ४—पापक राशिक भारकेँ नष्ट कयनिहारि।

आगम-विलिखित[५] तुअ गुन गाओल
विमल[६] नृत्य दिअ दाने ।
सकल सभा जय करु परसनि[७] अब
भानुनाथ कवि भाने ।।

(अथ नान्दीश्लोकं पठन् सूत्रधारः प्रविशति। यथा—

नृत्यारम्भ-चलद्गजांशुक-नखप्रान्ताभिसंभेदित-
श्रीसोदर्य-गलत्सुधारसलवा जीवत्कपालावली ।
तत्त्रासाऽऽकुलिताऽम्बिकाश्रितवपुः स्वान्तप्रमोदाऽन्वितः
शम्भुर्यैश्च[१] नगाधिराज-तनयाऽधीशः स्मितः पातु वः ।।१।।

अपि च

यस्याऽऽनन्दनिधे निदाघ-जलदप्रौढस्वनिप्राप्तिता[२]
नृत्यत्केकि-नवीन-भेकनिनदप्रोद्यन्मनोजातुरा ।

५—तन्त्रशास्त्रोक्त। ६—नाटक उपयोगी नृत्ये होइछ, अथ क्यांकि 'बुद्धि' पाठान्तर कय सकैत छथि। ७—प्रसन्ना ।

(एकर बाद नान्दीश्लोक (नाटकीयमङ्गलपद्य) पढ़ैत सूत्रधार प्रवेश कय रहल छथि।) यथा—
महादेव जखन नाचय लगलाह तँ गजचर्मरूप वस्त्र फहराय लागल जकर नहक कोरक खोँच(संभेदित)लगला पर चन्द्रमा सँ (श्रीसोदर्य) अमृतक किछु रस गरय लागल जाहिसँ मुण्डमाला जीवय लागल । ओहि जीवैत मुण्डमालाक डरेँ व्याकुल भय पार्वती महादेव केँ भरि पाँज केँ पकड़ि लेल ताहिसँ मनहि मन परमानन्द केँ प्राप्त करैत हिमालयक पुत्रीक स्वामी भगवान् शम्भु मुसुकाइत अहाँ लोकनिक रक्षा करथु ।।१।।
आओरो—
प्रचण्ड गर्मीक मेघक प्रौढ़ गर्जन सँ प्रस्तुत, नचैत मयूर ओ नवीन बेङक

१—यस्य—मूल मे। २—प्राप्तता—मूल मे।

राधाऽऽलिङ्गन हारविच्छलितश्रेणी गता मालयतां
श्रीसंयुक्तमहेश्वरक्षितिपतिस्तेन ध्रुवं पाल्यताम् ।।२।।

(ततो यवनिकामुत्क्षिप्येश्वरवन्दनं कृत्वाऽर्थं प्रकाशयेत् ।)
(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः – अलमतिप्रसङ्गेन । आर्ये ! इहागम्यताम् ।
नटी—(प्रविश्य सूत्रधारं प्रति) एसाह्मि, अज्जउत्त ! आदिसउ ।
[एषास्मि, आर्यपुत्र ! आदिशतु ।]
सूत्र०—आदिष्टोऽस्मि विहित-कुसुममाल-सकल-महीपाल - मुकुट-चलितभाल-विमलपरिमलाधिवासित-पदकमलेन प्रबल - जिनप्रचण्डमत - खण्डन-क्षमसुदक्षबहुपण्डित - परिमण्डित-मिथिलाधीशवंशावतंसेन विविधरस-विराजमान-काव्यप्रकाशाभिधान - प्रभृतिनिखिलप्रबन्धगणदर्शनभाग्नि-

शब्द सँ उत्पन्न कामक कारणेँ आतुर, राधाक आलिङ्गन सँ छाती मे उखड़ल मोतीमालाक बेन्हक खुलल पाँती जाहि आनन्दक निधिस्वरूप श्रीकृष्ण भगवानक माला भय गेलनि अछि से भगवान् राजा महेश्वर सिंहक सदा पालन करथु ।।२।।

(तकर बाद परदा उठाय ईश्वरक वन्दना कय वक्तव्य प्रकाशित करी)
(नान्दीक बाद)

सूत्र०—आन आन प्रसङ्ग केँ रहय देल जाय। आर्ये ! एम्हर आउ।
नटी – (प्रवेश कय) इयेह छी, आर्यपुत्र, आदेश दिअ।
सूत्र०—आदेश भेटल अछि, फूलक मालासँ सजाओल सकल राजाक मुकुट सँ शोभित माथक निर्मल सुगन्धि सँ सुवासित चरणकमल सँ युक्त,—प्रबल बौद्धक प्रचण्ड मतक खण्डन करबा मे समर्थ अतिपटु बहुतो पण्डित सँ सुशोभित मिथिला नरेशक वंशक भूषण स्वरूप, विविध रस सँ युक्त 'काव्यप्रकाश' प्रभृति सकल प्रबन्ध सभ मे कुशाग्र बुद्धिवला, पर्याप्त सोनाक दानसँ राजा कर्णकेँ जितनिहार, नवीन महाराजाधि-राजक पद पर सुशोभित श्री महेश्वर सिंह देवक द्वारा जे खोआल'

प्रज्ञेन, प्रचुरतर-स्वर्ण - वरदान-जितकर्णेन[3] नवमहाराजाधिराजपद-राजित-श्री श्रीमहेश्वरसिंहदेवेन । यथा—'खौआल' कुलानन्द-चन्दन-नेन्दनोपाध्याय - समुचितसुत-श्रीबबुजनोपाध्यायकाग्रज - श्रीभानुनाथ-दैवज्ञप्रणीतं प्रत्यग्र-प्रभावतीहरण-प्रबन्धमनुसन्धाय [4]सन्तापं भवन्तः शमयन्तु ।

नटी—उण केरिशोसो मिहिलावइ महाराओ । [पुनः कीदृशोऽसौ मिथिलापति महाराजः ।]

सूत्रधारः—

जातः खण्डवलाकुलाऽर्णव-समुद्भूतादितेयद्रुमः
किं वा धीरगुणज्ञताऽचलधरः शौरिः प्रजापालने ।
कन्दर्पः क्षितिमण्डलाऽऽश्रिततनुः किं वा द्विनेत्रो हरिः
संग्रामे खलु रुद्रमूर्त्तिरिति यं लोकः सदा मन्यते ॥३॥

नामक वंशकेँ आनन्दित करबा मे चन्दनस्वरूप नेनन (नेन्दन वा नन्दन) उपाध्यायक समुचित (जेहन होयबाक चाही, वा हुनके सन महा-पण्डित) पुत्र श्रीबबुजन उपाध्यायक जेठ भाय श्रीभानुनाथ दैवज्ञ (ज्यो-तिषी) क बनाओल प्रभावतीहरण नामक प्रबन्ध (नाटकरूप) लयकेँ सभक सन्ताप केँ अहाँलोकनि शमन करैत जाउ ।

नटी—ई मिथिलापति महाराज आओर केहन छथि ?

सूत्रधार—वंशिष्ठ 'खण्डवला' वंशरूपी समुद्र सँ उत्पन्न देववृक्ष (कल्पवृक्ष) स्वरूप आ की विद्वानक गुण जनबा मे अचल (दृढ़) प्रजाक पालन करबा मे विष्णुस्वरूप, पृथ्वीमण्डल पर देह धारण कयने कामदेव-स्वरूप, आ की दू आँखिवला विष्णुभगवान् । युद्ध मे रुद्रक स्वरूप, एहि तरहेँ लोक जनिकाँ बुझैत छनि (तेहने छथि ई महाराज) ॥३॥

३—'कर्णनर महा' । ४—'सन्तो भवन्तु,'—मूल मे ।

अपि च,

क्षमा क्षोणीतुल्या वचन-रचना चाऽमृतसमा
समा यस्य ज्योत्स्ना प्रभवति महोदारयशसा[3]
मनीषा सुश्लेषा स्फुरति बुधसिद्धान्तविषये
दयाक्रान्तं स्वान्तं विलसति नितान्तं प्रतिपलम् ॥४॥

नटी—हंहो ! भाअधेअं । भोदु भोदुत्ति देईआ चरिअं मंगलरूअं पढमं गीओ [हंहो भागधेयम् !! भवतु भवत्विति देव्याश्चरितं मङ्गलरूपं प्रथमं गीयताम् ।]

(सूत्रधारादयो गायन्ति)

गीत सं०--२

चलित[1] चञ्चल चारुलोचनि[2], भयविमोचनि, सदय भगवति हे ।
रुचिर भूषन तनु-विभूषित, बिन्दुविलसित, ललित[3]-हनुगति हे ॥
हरविहारिणि मुक्तिकारिणि, भगत-तारिणि, सुरशुभङ्करि हे ।
गिरिनिवासिनि शुम्भनाशिनि, बलिपलाशिनि[4], रिपुभयङ्करि हे ॥
चक्र शूल कृपाण-शर धनु-कुलिश-तोमर-उरग-धारिणि हे ।
सिंहवाहिनि विभवदायिनि, परमपाविनि, महिष-दारिणि हे ॥

आशोरो—

जनिका पृथ्वी सदृश क्षमा छन्हि, अमृतक समान वचन-विन्यास छन्हि अत्यन्त उदार यश सँ चन्द्रमाक किरण समाने छन्हि, विद्वानक सिद्धान्तक विषय मे विलक्षण बुद्धि होइत छन्हि ओ मन हरदम दयासँ अत्यन्त भरल रहैत छन्हि ॥४॥

नटी—अहो भाग्य ! होउ होउ, देवीक चरित मङ्गल-स्वरूप पहिने गाबी ।

(सूत्रधार, नटी, पारिपार्श्विक गबैत छथि)

गीत सं०—२

१—संवरण कयल । २-सुन्दर आँखिवाली । ३—सुन्दर हनु (ठुड्डी) सँ युक्ता । ४—बलिदान केँ प्राशन कयनिहारि (ठोर मे लगओनिहारि) ।

वसन लोहित देह शोभित, कयल मोहित सकल अखिल हे ।
स्फुरित चाप निनाद[5] सुनि सुनि, त्वरित हरषित, पड़ल निजबल हे ॥
भानुनाथ सुदान माङ्गथि, सङ्ग कय तोहि नवन हुतभुग[6] हे ।
श्रीमहेश्वर सिंह भूपति, सुतविनोदित जिबथु युग-युग हे ॥

नटी—(कर्णे हस्तं दत्वा) अच्चरिअमच्चरिअ !! कीरिसोसो कलअलो जणीये ?
[आश्चर्यमाश्चर्यम् !! कीदृशोऽसौ कलकलो जायते ?]

पारिपार्श्वः—श्रीकृष्णः स्वपितुः यज्ञं कारयति । तत्र देवगन्धर्वादयो दिव्यलोकाद् आजग्मुः । महेन्द्रोऽपि मन्त्रिणा सह आगमिष्यति । नृत्यावसरो महान् । अतो मया सह यूयं तत्र अवसीदथ ।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

० इति प्रस्तावना ०

५—शब्द । ६—अग्नि ।

नटी—(कान पर हाथ दय) आश्चर्य ! आश्चर्य !! केहन ई हल्ला भय रहल छैक ?

पारिपार्श्व—श्रीकृष्ण अपन पिताक यज्ञ कराय रहल छथि । ओहिठाम देव गन्धर्व लोकनि दिव्यलोक सँ अयलथिन्ह अछि । देवराज इन्द्रो मन्त्रीक संग अओथिन्ह । नृत्यक ई महान् अवसर अछि । तैं अहाँलोकनि हमरा संग ओतय चलैत चलू ।

(सभ बाहर भय गेलाह)

॥ प्रस्तावना समाप्त ॥



(अथ प्रथमोऽङ्कः)

(महेन्द्रप्रवेशार्थं बड़ारीरागे गीतम्) सं०—३

लेल परवेश सकल—सुरराज ।
तुरग[1] चढ़ल भावित निज काज ॥
नयन सहस्रवर राजित देह ।
आबथि वासव[2] हरिक सिनेह ॥
वसन विचित्र पवित्र शरीर ।
सङ्ग सतत वाचस्पति[3] धीर ॥
प्रबल दनुज[4] जनि भेल जगभार ।
तकर कदाचित होयत विचार ॥
भानुनाथ भन सुरपतिरूप ।
जिबथु तनय सङ्ग महेशर भूप ॥

(ततो यज्ञभूमि बृहस्पतिना सह महेन्द्रः प्रविशति)

श्रीकृष्णः—(हर्षोत्थाय) अहोभाग्यम्, अहोभाग्यम् ! (इति ब्रुवन् समन्त्रिणं महेन्द्रं स्वासने उपवेश्य)—

समुद्दिश्य कृतो यज्ञस्तातेन मम सांप्रति ।
आगतो मन्त्रिणा साक्षात् किमु भाग्यमतः परम् ॥४॥

(आब महेन्द्रक प्रवेशक हेतु बड़ारीराग मे गीत) सं०—३

१—घोड़ा । २—इन्द्र । ३—बृहस्पति । ४—दैत्य ।

(तखन यज्ञभूमि मे बृहस्पतिक सङ्ग महेन्द्र प्रवेश करैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(आनन्द सँ उठिकें) अहोभाग्य, अहोभाग्य ! (ई कहैत मन्त्री सहित महेन्द्र कें अपन आसन पर बैसायकें)—जनिक उद्देश्य सँ हमर पिता एखन यज्ञ कयलनि अछि से साक्षात् स्वयं मन्त्रीक सङ्ग आबि गेलाह—एहि सँ बेस की भाग्य भय सकैछ ।

महेन्द्रः—(श्रुत्वा सस्मितम्) अहो ! ममैव भाग्यं, किं ते भाग्यम् ।

यदीय-मुखपङ्कजच्युतसरस्वतीभिः श्रुतिः
तथाऽपि निखिलं यशस्तव न गीतमुज्जृम्भते ।
तदीय गुणगौरवं हृदि विचिन्त्य किं ब्रूमहे
प्रसीद करुणानिधे ! त्रिभुवनाधिपस्त्वं यतः ॥६॥

बृहस्पतिः—

विशदगुणमयूखश्रेणिभूषाविशेषां
स्तुतिपदमणिमालामादरात् ते निवेद्य ।
अतिमलिनहृदोऽपि द्योतते पुण्यलक्ष्मीः
अविरल वरलाभाऽऽनन्दनिष्कल्मषस्य ॥७॥

(अथ सर्वे महेन्द्रोक्त्या 'उचितो'-गीतं गायन्ति)

गीत सं०—४

माधव ! सुनिअ वचन परमाने ।
सुपुरुष जानि शरण अवलम्बल
निज अभिमत[1] दिअ दाने ॥

महेन्द्र—(सुनि मुसुकाइत) अहो ! ई तँ हमरे भाग्य भेल, एहिमे अपनेक की भाग्य !

जनिक (अहाँक) मुखकमल सँ बहरायल वाणी सभ सँ वेद भेल, सेहो वेद अहाँक सकल यश कें नहि गाबि पबैत अछि तनिक गुणक महत्ता कें मनमे विचारि की कहू ! अहाँ तँ तीनू भुवनक अधिपति छी । हे करुणाक भण्डार अहाँ प्रसन्न होउ ॥६॥

बृहस्पति—विशाल गुणक किरणक पाँतीक शोभाविशेष सँ युक्त, स्तुतियुक्त पदरूपी मणिक माला आदरपूर्वक अहाँकेँ समर्पित कय अत्यन्त मलिन हृदयो बला जे सुलभरीतिएँ वरदान पओला सँ आनन्दित ओ निष्पाप भय जाइछ तनिकहु पुण्यक कारणेँ लक्ष्मी प्रकाशित रहैत छथिन ॥७॥

(आब सभ महेन्द्रक अनुरोधेँ उचितो गीत गबैत छथि ।)

गीत सं०—४

१—अभीष्ट ।

कि करत धन जन, कि करत सुवचन
करिअ मनहिँ अवगाही[2] ।
एक विवेक जाहि बस[3] मानस
अविरल यश होअ ताही ॥
सुजन सिनेह कबहु नहि बिसरथि
जनिक प्रथम देल बाते ।
मृग परिहरि[4] हिमकर नहि ऊगथि
सहथि जगत उपहासे ॥
हृदय नयन हेरिअ करुणाकर
इहो अछि जगत बेआपे ।
अङ्गिरल[5] गरल तेजल नहि शङ्कर
सहल सतत बरु तापे ॥
भानुनाथ भन सुनिअ सकल जन
एतहि बिराजित माने ।
मिथिल-महीपति महेश्वर सिंह छथि
अविरल गुनक निधाने ॥

श्रीकृष्णः—अहो ! किमर्थमेतत् करोषि ? कथय तथ्यं, यदवश्यं मया कर्त्तव्यम् ।

महेन्द्रः—मेरोरुत्तरपार्श्वे वज्रं नाम पुरमस्ति । तत्र वज्रनाभनामा दैत्यो वसति । स तु ब्रह्मणो वरप्रदानेन सततम् अस्मदादीन् देवान्

२—विचार । ३—जनिक मन मे एकमात्र विवेक बसैत छनि ।
४—हरिणक चिह्न कें छोड़ि कें चन्द्रमा नहि उगैत छथि । ५—अङ्गीकार (स्वीकार) कयल विषकेँ ।

श्रीकृष्ण—अहो ! किऐक ई करैत छी ? कहू असली बात जे हम अवश्य करब।
महेन्द्र—सुमेरु पर्वतक उत्तर लगहि मे वज्र नामक नगर अछि । ओतय वज्रनाभ नामक दैत्य बसैत अछि । ओ ब्रह्माक वरदानसँ हरदम हमरा-

क्षोभयति । अत आगतोऽस्मि । तद् दैत्यस्य निपातनोपायं कुरु ।

श्रीकृष्णः—हे देवराज ! तस्य वृत्तं समग्रं मया ज्ञातमेव । किञ्च तस्य तु त्रैलोक्यसुन्दरी प्रभावती-नाम्नी एका कन्याऽस्ति । सा तु स्वयंवरे बन्धुभिः स्थापिता । तां प्रति अत्रैव आगत-शुचिमुखादीन् हंसान् प्रेषय । प्रद्युम्नादीनां कुमाराणां परिणयनकथां कुर्वन्तु ।

महेन्द्रः—हे भद्रनटाः ! सपत्नीकं शुचिमुखं समाबाहय ।

(इत्याबाहिते हंसौ प्रविशतः । तत्र प्रवेशगीतम्)

गीत सं०--५

हंसी हंस कयल परवेश । अविरल[1] गमन जनिक सभ देश ॥
धवल शरीर सतत समधान । चञ्चु चरणयुग कनक समान ॥
क्षीरनीरविवरण[2] विधियुक्त । वचन रचथि जनि मधु-समतुल ॥
अनुपम गति मति परम अपार । रङ्ग महीतल करथि विहार ॥
भानुनाथ भन हंसक भेश । गुणविन्दक छथि मिथिला-नरेश ॥

हंसः (शुचिमुखः)—हे देवराज ! मां किमाज्ञापयसि ?

लोकनि(देवगण) कें दुःख दैत अछि । तें आएल छी । ओहि दैत्यक पछाड़बाक उपाय करू ।

श्रीकृष्ण—हे देवराज ! ओकर चालि सभटा हमरा बुझले अछि । एक बात, ओकरा एकटा तीनूलोक मे सभ सँ सुन्दरी कन्या प्रभावती नामक छैक । ओकरा बन्धुबर्ग स्वयंवर मे रखलकैक अछि । तकरा (प्रभावतीक) प्रति एही ठाम आयल शुचिमुख प्रभृति हंसकें पठाउ जे प्रद्युम्नादि कुमारक वैवाहिक कथा करय ।

महेन्द्र—हे भद्रनटलोकनि ! पत्नी सहित शुचिमुख कें बजाउ ।

(एहिनरहें बजओला पर हंस ओ हंसी प्रवेश करैत अछि ।)

(तकर प्रवेश गीत) सं०—५

१—सुलभ । २—दूध ओ पानि कें फुटयबाक विधिक कारण ।

हंस (शुचिमुख)—हे देवराज ! हमरा की आज्ञा दैत छी ?

महेन्द्रः—हे शुचिमुख ! पत्न्या सह त्वं वज्रपुरं गत्वा प्रभावतीं प्रति प्रद्युम्नस्य परिणयनकथां कुरु, यथा कोऽपि नान्यो जानाति । प्रभावती तु यथा यथाऽनुरक्ता भवति तथा तथा प्रद्युम्नस्य गुणो वक्तव्यः । वृत्तान्तं चाऽनुदिवसं तत्सकाशात् केशवे निवेदय ।

हंसः—हे हंसि ! अत्राऽऽगच्छ । श्रूयतां देवराजेन यदाऽऽज्ञापितं तद् भवत्या श्रुतमेव । मया सह व्रज प्रभावतीं प्रति ।

हंसी—

नाहं व्रजामि न भवामि मनुष्यदूती
दैत्यात्मजां प्रति विचारविशारदोऽसि ।
शश्वत् कलेवरमिदं बत यत् स्वकीयं
स्वामिन्न जातु परकुक्षिसमुद्भरायाः ॥८॥

हंसः—हेमन्दभाग्ये ! गम्यतां, गम्यताम् । त्रैलोक्याधिपतेः आज्ञाभङ्गं मा कुरु ।

हंसी—लवणक्रयार्थं ताम्रकर्षद्वयं प्रतिवेशिन्या ऋणमस्ति तद् ददातु ततो यास्यामि ।

महेन्द्र—हे शुचिमुख ! पत्नीक संग सों वज्रपुर जाय कें प्रभावतीक प्रति प्रद्युम्नक विवाह कथा करह, जेना क्यो जानय नहि । प्रभावती जेना जेना अनुरक्त होअय तेना तेना प्रद्युम्नक गुण बजिहह । समाचार सभदिन ओहिठाम सँ आबि श्रीकृष्णकें सुनबिहह ।

हंस—हे हंसी ! एतय आउ । सुनू देवराज जे आज्ञा देल अछि से सुनबे कयल अछि । एखनहि हमरा संग प्रभावती लग चलू ।

हंसी—ने हम कतहु जाइत छी आ ने मनुष्यक दूती बनैत छी । दैत्य-पुत्रीक प्रति विचार करबा मे तों अहीं पटु छी । हे स्वामिन् ई शरीर जे अपन थिक से दोसरेक शरीरों पेट फारनिहारिक कदापि नहि भय सकैछ ॥८॥

हंस—हए अभागली ! जाह, जाह । तीनू लोकक अधिपतिक आज्ञा कें नहि टारह ।

हंसी—नोन किनबाक लेल दूटा तामक पाइ पड़ोसिनिक धारने छियैक, से दिअ तँ जाएब ।

हंसः—आः किं वदसि ! महीपतेरादेश एव दुर्लभः । आदेशे प्रभवति ग्रामाधीश-
त्वमपि सुलभं, किं तामकथादिधनप्राप्तिः ।

(एवं यथा यथा सभ्यलोकानुरञ्जनं तथा तथा कृत्वा हंसी
निष्क्रान्तौ ।)

इति श्रीभानुनाथ-दैवज्ञविरचिते प्रभावतीहरण--
प्रबन्धे प्रथमोऽङ्कः ।।

अथ द्वितीयोऽङ्कः

(अथ वज्रपुरे हंसं संस्थाप्य शुचिमुखी दैत्यराजस्यान्तःपुरे प्रभावती-
निकटं गत्वा तां प्रणमत् । प्रभावती तु आशिषं दत्त्वा कुशलादिकम् अपृ-
च्छत् । हंसी स्वपरिचयं दत्त्वा पादसंवाहनादि शुश्रूषां च कृत्वा नानाक-
थाऽऽलापं करोति ।)

हंस—ओह, ई की बजैत छी ! राजाक आदेश दुर्लभ होइछ । जं आदेश भेटि
गेल तँ गामोक मालिक बनब सुलभ भय जाइछ, आ ई तामक पाइ
पओनाइक तँ कथे कोन ।

(एहि तरहेँ जेना जेना सभ्यलोकक मनोरञ्जन होइछ, तेना तेना हंस
ओ हंसी बहार भय जाइछ ।)

इति श्रीभानुनाथ दैवज्ञक बनाओल प्रभावतीहरण नामक प्रबन्ध
(रचना)मे प्रथम अङ्क समाप्त भेल ।।

द्वितीय अङ्क

(आब वज्रपुरमे हंसकेँ स्थापित कय शुचिमुखी (हंसी) दैत्यराजक
ड्योढ़ी (रनिवास) मे प्रभावतीक लग जाय हुनका प्रणाम कयलक । प्रभावती
आशीर्वाद दय कुशलादि पुछलथिन्ह । हंसी अपन परिचय दय पयर जाँति
पंखा हौंकि इत्यादि सेवा कय अनेक कथा ओ गप्प करय लगैत अछि ।)

प्रभावती—हे हंसी ! त्वत्कथाऽऽलापम् अतिसुन्दरं लगति । अतः क्वचित्
क्वचिद् दिवसे अत्र त्वया आगन्तव्यम् ।

हंसी—अवश्यम् आगमिष्यामि । (इति निष्क्रान्ता ।)

* * *

(पुन र्नेपथ्ये—पारिपार्श्वः—हे नायकाः ! वज्रपुराद् आगता हंसी
प्रभावतीस्वरूपं यथादृष्टन्तथा निवेदयति गीतेन—)

गीत सं० – ६

माधव ! कि कहब तनिक बिशेषे[1] ।
जनिक वदन देखइत चतुरानन[2], चानहु देल परिवेषे[3] ।।
चिकुर[4] निकर वेणीकृत लम्बित, देखल एहन अभिरामे[5] ।।
लोहित बिन्दु[6] सुरुज समुदित जनि, तिमिर पाछु परिनामे ।।
दशन वसन, नासा, रद, लोचन[7] निरखि लागु अनरीती ।
बन्धुक, तील, कुन्द, सरसीरुह, एकहि समय परतीती ।।

प्रभावती—हे हंसी ! तोहर कथा ओ गप्प बड़ नीक लगैत अछि । तेँ कहियो
कहियो एतय अबिहह ।

हंसी—अवश्ये आयब । (ई कहि बाहर भय जाइत अछि ।)

* * *

(फेर नेपथ्य मे—पारिपार्श्व—हे नायक लोकनि ! वज्रपुर सँ आयल
हंसी प्रभावतीक स्वरूप जहिना देखलक तहिना गीत द्वारा श्रीकृष्ण केँ
निवेदित करैत अछि—)

गीतसं० – ६

१—अधिक वर्णन । २ ब्रह्मा । ३—परिधि, मुँहक आगू चन्द्रमाकेँ व्यर्थ
बूझि विधाता हुनका चाक भरसँ घेरि देल । ४—केश-समूह । ५—सुन्दर ।
६—लाल टीप । ७—ठोर, नाक, दाँत ओ आँखि क्रमशः मधुरीक फूल, तिलक
फूल, कुन्दक कली ओ कमल बुझाइत अछि ।

सरस मृणाल वाल चकवायुग[8], शैवल गिरिवर[9] कूले ।
सतत अमिअ सम वचन सुसिञ्चित, तें नहि हो उनमूले ॥
केहरि-समाज राज[10] गज-करयुग, तसु तल पल्लव भासे ।
कामिनि पुण्य प्रताप दाप[11] तह, न करय त्वरित नरासे ॥
भानुनाथ भन हंसगमनि छवि, रसबिन्दक नहि आने ।
खण्डवला-कुलकमल महीपति, महेश्वर सिंह सुजाने ॥

श्रीकृष्णः—हे हंस ! हंसी पुनरपि गच्छतु । प्रभावती-हृद्गतं वृत्तं ज्ञात्वाऽऽ वदतु ।

हंसः - हे हंसि ! तस्याः कथाऽनुकूलताम् आनीय श्रीकृष्णं श्रावय ।

* * *

(ततो हंसी पुनरपि परिधानादि-वस्त्रं याचयित्वा प्रभावतीनिकटं गतवती । तत्र--)

प्रभावती - हे सखि ! आगच्छ । कथय कुत्रापि किमप्याश्चर्यवृत्तं दृष्टं श्रुतं च भवत्या ?

८—कमलक नाल पर एक जोड़ चकवा पक्षी (रोमावलीक ऊपर (स्तन । ९—पहाड़क कात मे सेमार (स्तनक कात मे रोमावली) । १०—सिंहक लग द् हाथीक सूँड़ शोभित (डाँड़ मे सिंहक ओ जाँघ मे सूँढ़क सादृश्य), ताहि सूँढ़क तल (तरबा) । कामिनीक प्रतापें ओ सिंह हाथीकें नहि खाइछ । ११—दर्प (प्रभाव) ।

श्रीकृष्ण—हे हंस ! हंसी फेर जाओ प्रभावतीक हृदयक भाव बूझिकें आओ।

हंस—हे हंसी ! हुनक (प्रभावतीक) कथाक अनुकूल बात आनिकें श्रीकृष्ण कें सुनाउ ।

(तखन हंसी फेरि ओढ़न–पहिरन वस्त्र माँङिकें प्रभावतीक लग गेलि । ओतय—)

प्रभावती—हे सखी ! आउ कहू, कतहु कोनो आश्चर्य घटना देखलहुँ ओ सुनलहुँ अछि अहाँ ?

हंसी—हे सखि ! शृणु, यद्दिनात् तव निकटे ममागमनं तद्दिनात् सततं ये केचित् तरुणास्ते मम पृष्ठे लगन्ति, तवैव वृत्तान्तं च पृच्छन्ति ।

प्रभावती—कीदृशास्ते तरुणाः ?

हंसी—ते तरुणाः सुन्दराः गुणवन्तोऽपि च । परञ्च तव गुण-कुल-सौन्दर्याऽन्वेषणे कोऽपि न योग्यः । यः कोऽपि तव गुणकुलसौन्दर्यसादृशः, सोऽतिदूरे तिष्ठति ।

प्रभावती स च कः ? कीदृशः ?

हंसी—स तु श्रीकृष्णस्य औरसः पुत्रः, प्रद्युम्नेति तस्य नाम । तत्सौन्दर्यादि गुणं किं वदामि । यथा—

अमल कमलदल नयन विराजित वदनचन्द्रमनुवारम् ।
द्रवति चापि युवती यदि पश्यति वहति पञ्चशरभारम् ।

हंसी - हे सखी ! सुनू, जाहि दिन सँ अहाँक लग हम अयलहुँ अछि ताहि दिन सँ जे कयो युवक छथि से हमर पाछू लागल रहैत छथि आ अहीँक कथा पुछैत छथि ।

प्रभावती—केहन छथि ओ युवक लोकनि ?

हंसी—ओ युवकलोकनि सुन्दर ओ गुणवान् छथि । परन्तु अहाँक गुण कुल ओ सुन्दरता कें देखला पर कयो नहि योग्य छथि । जे कयो अहाँक गुण कुल ओ सौन्दर्यक समान छथि, से बहुत दूर मे छथि ।

प्रभावती—से के थिकाह ? केहन छथि ।

हंसी—ओ श्रीकृष्णक औरस (अपन विवाहित स्त्री मे अपना द्वारा उत्पन्न) पुत्र थिकाह, प्रद्युम्न हुनक नाम थिकन्हि । हुनक सुन्दरता आदि गुण की कहू । जेना—

स्वच्छ कमलक पत्तीक समान आँखि सँ शोभित मुखचन्द्र कें युवती जँ बेरि बेरि देखैत अछि तँ द्रवित भय जाइत अछि ओ कामदेवक भार कें वहन करय लगैछ । हाय हाय ! ! मनिक शत्रुक पत्नी सभक आँखिक काजर भरल

हरि हरि ! ! यस्य वैरिवनिताजन नयनज कज्जलनीरम् ।
चलति सदा यमुनाजलतुलमिति स्मर भाविनि ! धीरम् ॥४॥

प्रभावती—हे सखि ! पुनरपि तस्य गुणं श्रोतुमिच्छामि ।

हंसी—हे सखि ! अद्य पुन द्वारवतीं गन्तुमिच्छामि । यदि यास्यामि तदा प्रद्युम्नेन सह कथां कृत्वा अत्रागत्य सर्वं तस्य गुणं भवतीं वदामि ।

प्रभावती—गच्छ, गच्छ । तद्देशीय-कुमारी-खेलनीयं वस्तु मत्सन्देशार्थम् आनेतव्यमिति ।

(हंसी श्रुत्वा पत्या सह निष्कान्ता)

★ ★ ★

(पुनर्नेपथ्ये-पारिपार्श्वः-हे नायकाः ! हंसी पुनरप्यागता प्रभावती-वयोवर्णनं गीतेन कथयति-)

गीत सं०—७

माधव ओ !
ता छवि सुनिअ हृदय दय, रसमय,
चान-कला सन उपचय[1] ॥

नोर सतत यमुनाक जलक समान चलैत अछि—एहन ओहि धीर (प्रद्युम्न) केँ स्मरण करू ॥४॥

प्रभावती—हे सखी ! आओर हुनक गुण सुनय चाहैत छी ।

हंसी—हे सखी ! आइ फेर द्वारवती जाय चाहैत छी । जँ जायब तँ प्रद्युम्न सँ गप्प कय एतय आबि हुनक सभ गुण अहाँ केँ कहब ।

प्रभावती—जाउ, जाउ । ओहि देशक कुमारि सभक खेलयबाक वस्तु हमरा लेल सन्देस लेने आयब ।

(हंसी सुनिकेँ पतिक संग बाहर जाइछ)

(फेर नेपथ्य मे - परिपार्श्व - हे नायकलोकनि ! हंसी फेर आबि केँ प्रभावतीक वयसक बर्णन गीत द्वारा कहैत अछि—)

गीत सं०—७

१—बढ़ल, परिपूर्ण ।

देखयित ओ !
युवजन मुरुछि-मुरुछि खस; परवश,
से बुझि रमणी बेकत[2] हँस ॥
कि कहब ओ,
धनिक परम अनुपम गति; बिनु पति,
लाज मदन-वश[3] छनमति ॥
पुनुपुनु ओ,
तरुणक कहिनी[4] अनवसर, कत कर,
कहुलन बालक-गति[5] घर ॥
तनि गुन ओ,
सुनइत विहुँसि-विहुँसि रह; मोहि कह,
अचरज लागु पुलक[6] तह ॥
रस बुझ ओ,
मिथिल-महीपति बड़ जन; दय मन,
भानुनाथ कविवर भन ॥

श्रीकृष्णः—हे शुचिमुख ! सुवर्णदशकं हंसी गृह्णातु । एकदा पुनरपि यातु । येनोपायेन सा वशीभूता भवति तमुपायं करोतु ।

* * *

(हंसी सुवर्णदशकं गृहीत्वा हर्षिता वज्रपुरे गतवती । तत्र)

२—व्यक्त । ३—काम विकार भेला सँ ।
४—चर्चा, अवसर नहिओ रहला पर कतेको बेर करैछ । ५—नेनमति ।
६—आनन्द सँ ।

श्रीकृष्ण—हे शुचिमुख ! दस सुवर्ण हंसी लेअओ । एक दिन फेरो जाओ । जाहि उपाय सँ ओ वश मे आबय से उपाय करओ ।

* * *

(हंसी दस सुवर्ण लय प्रसन्न भय वज्रपुर गेलि । ओतय-)

प्रभावती—हे हंसि ! कथय तस्य सर्वं गुणम् ।

हंसी—हे सखि ! तस्य सर्वं गुणं शेषनागोऽपि वक्तुमशक्तः अहं वराकी किं वदामि । किन्तु त्वां किञ्चिद् वक्तुमिच्छामि ।

प्रभावती - कथय यत् कथनीयं तव ।

हंसी - हे सखि ! तव यत्सौन्दर्यादिगुणो व्यर्थमुपलभ्यते । मन्मतेन त्रैलोक्यसुन्दरं प्रद्युम्नं वरय । तेन सह तव सङ्गमः समुचितो भविष्यति ।

प्रभावती—(बाह्यरोषेण हंसीं विलोक्य) इति सर्वं पित्रे निवेदयामि । अद्य तव धौष्ट्यस्य निवृत्तिं कारयामि ।

हंसी — (इति श्रुत्वा शनैः शनैः प्रभावत्याः पादग्रहणं कृत्वा) हे सखि ! एकोऽपराधो मम क्षन्तव्यः पुनः द्वितीयो न भविष्यति ।

प्रभावती — (विहस्य) हे सखि ! मा भैषी ममापि मनस्यस्मिन् प्रद्युम्ने

प्रभावती - हे हंसी ! कहह हुनक सभ गुण ।

हंसी - हे सखि ! हुनक सभ गुण कहबा मे शेषनागो असमर्थ छथि, आ हम बेचारी की बाजू । एक बात अहाँ कें कहय चाहैत छी ।

प्रभावती - कहू, अहाँ कें जे कहबाक हो ।

हंसी - हे सखि ! अहाँक बयस सुन्दरता आदिगुण व्यर्थ भाय रहल अछि । हमरा विचारें तीनू लोक मे सुन्दर प्रद्युम्नकें वरण करू । हुनक संग अहाँक मेल ठीक होयत ।

प्रभावती— (ऊपर सँ तमसाइत हंसीक निन्दा कयकें) ई सब बाबूजीकें कहि देबनि । आइ तोहर गर्व (चतुराइ) समाप्त करबाय देबह ।

हंसी— (ई सुनि नहुँ नहुँ प्रभावतीक पाएर पकड़ि) हे सखि ! एकटा अपराध हमर क्षमा करू, फेर दोसर नहि होयत ।

प्रभावती (हँसि) हे सखि ! जनु डराउ, हमरो मन सेँ ओही प्रद्युम्न

संलग्नमस्ति । येनोपायेन अत्राऽऽगच्छति तमुपायं कुरु । तस्योद्वेगेन मह्यं किमपि नहि रोचते ।

हंसी— हे सखि ! इदानीमेव यास्यामि । तवाऽनुरोधेन समानेष्यामि ।

(तत्र वज्रनाभः प्रविशति)

वज्रनाभः—रे हंसि ! प्रभावत्या सह किं वदसि ?

हंसी— किमपि न । एको भद्रनामा नर्त्तको द्वारकायां दृष्टः । तस्य वृत्तान्तं प्रभावत्यै निवेदयामि ।

वज्रनाभः—सत्यं सत्यं, मयापि तस्य गुणश्चारमुखाच्छ्रुतः । हे हंसि ! अत्रापि केनाप्युपायेन आगमिष्यति । यदि त्वमानेष्यसि तदा तेऽपि सुवर्णशतं दास्यामि ।

हंसी— अवश्यम् आगमिष्यति । इदानीमेव यास्यामि । (इति प्रभावतीं प्रणम्य निष्क्रान्ता ।)

*　　*　　*

मे लागल अछि । जाहि उपाय सँ एतय आबथि से उपाय करू । हुनक उद्वेग सँ हमरा किछु नहि नीक लगैत अछि ।

हंसी— हे सखि ! एखनहि जाएब । अहाँक अनुरोधें हुनका लायब ।

(ओतय वज्रनाभ प्रवेश करैत छथि)

वज्रनाभ—एए हंसी ! प्रभावतीक संग की बजैत छें ?

हंसी— किछु नहि । एकटा भद्र नामक नटुआ द्वारका मे देखलहुँ । ओकरे गप्प प्रभावतीकें कहैत छलियनि ।

वज्रनाभ—सत्ते; सत्ते, हमहुँ ओकर गुण गुप्तचरक मुँहें सुनलहुँ अछि । हे हंसी ! एतहु कोनो उपाय सँ ओ आओत । यदि तों अनबह तँ तोरो सय सुवर्ण देबहु ।

हंसी—अवश्य आओत । एखनहि जायब । (प्रभावतीकें प्रणाम कय जाइत अछि) ।

(पुन नेपथ्ये – पारिपार्श्वः – हे नायकाः ! हंसी पुनरभ्यागता प्रभावती-विरहवर्णनं गीतेन कथयति)

गीत सं० – ८

यदुपति[1] ! बुझिअ विचारी । अभिनव विरह बेआकुलि नारी ॥
नलिन[2] शयन नहि भावे । तनि[3] पथ हेरइत दिवस गमावे ॥
कैओ चानन कर लेपे । कैओ कह रजनि[4] रहल सनछेपे ॥
कोन परि करति निवाहु । शिशकर[5] किरण सतत करु दाहे ॥
तप जनि करय सभागे । निशि-दिन जपइत रह तसु नामे ॥
भानुनाथ कवि भाने । रस बुझ महेश्वर सिंह सुजाने ॥

हंसी– हे कृष्ण ! वज्रनाभेनाऽपि भद्रनटाऽऽनयनार्थं प्रेषिताऽस्मि ।

श्रीकृष्णः—अहो भाग्यम् ! (पार्श्वेऽवलोक्य) क्व प्रद्युम्नादयः कुमाराः ? सर्वे ममाऽऽज्ञया भद्रनटवेषं धृत्वा वज्रपुरे गच्छन्तु ।

(तत्र प्रवेशाय गीतम्) सं० – ९

रतिपति[1] संप्रति लेल परवेश । जनिक सकल जग वश[2] अकलेश ॥

(फेर नेपथ्य मे पारिपार्श्व—हे नायक लोकनि ! हंसी पुनः आबि प्रभावतीक विरह-वर्णन गीत द्वारा कहैत अछि —)

गीत सं० – ८

१—हे श्रीकृष्ण । २ – कमलक 'पात ओ फूलक' ओछाओन । ३ – प्रद्युम्नक बाट । ४ – राति संक्षेपे रहल । ५ – शीतकर (चन्द्रमा) ।

हंसी—हे कृष्ण ! वज्रनाभो भाद्रनटकेँ अनबाक हेतु हमरा पठओने छथि ।

श्रीकृष्ण – आह, भाग्यक बात ! (लग मे ताकि) प्रद्युम्न आदि कुमार कतय छथि ? सब हमर आज्ञा सँ भाद्रनटक वेष धारण कय वज्रपुर जाथु ।

(ततय प्रवेशक हेतु गीत) सं० – ९

१ – कामदेव (प्रद्युम्न) । २ – संसार वश मे ।

अपरुप[3] सरूप विराजित देह । त्रिभुवन सुन्दर जनि बिहि[4] रेह ॥
बहु गुण शोभित परम विवेक । शम्बर[5] शिशुहि जितल जनि एक ॥
अम्बर[6] अभरन नटसम साज । संगहि साम्ब-गद यादवराज ॥
भानुनाथ भन मदन[7] सरूप । जिवथु तनय संग महेश्वर भूप ॥

(इति गानोत्तरं प्रद्युम्न साम्ब-गदादयो नटवेषधराः कुमाराः प्रविशन्ति)

श्रीकृष्णः – हे यादवाः ! मम मौहूर्तिको ग्रामं गतः । कं संपृच्छ्य दिगन्तरं कुमारान् प्रेषयामि ।

पारिपार्श्वः – हे कृष्ण ! अद्यैव गच्छन्तु । तेनैव मौहूर्तिकेन विचारितोऽयं दिवसोऽतिसुन्दरः, अथवा पश्य, पश्य, एकः कोऽपि गुणी जनः पथक्रमेण समागच्छति । तं पृच्छामि । (इत्युक्त्वा पथिकाग्रे संगत्य पृच्छति-)

क्व गन्तासि, किमर्थञ्च कस्मात् त्वं समुपागतः ।
किमधीतं त्वया शास्त्रं कथय द्विज ! मे द्रुतम् ॥१०॥

---

३ – अपूर्व । ४ – विधाताक रेखा । ५ – शम्बर नामक दैत्य केँ एकसरे बाल्यावस्थहिमे जितने छलाह । ६ – वस्त्र ओ भूषण । ७ – कृष्णक द्वितीय पुत्र साम्ब, कृष्णक छोट भाए गद । ८ – कामदेवक स्वरूप ।

(एहि गानक बाद प्रद्युम्न साम्ब गद आदि कुमारलोकनि नटक वेष धयने प्रवेश करैत छथि)

श्रीकृष्ण – हे यादव लोकनि ! हमर ज्योतिषी गाम गेल छथि । कनिका पूछि केँ किन्हरहु कुमार सभकेँ पठबियनि ?

पारिपार्श्व—हे कृष्ण ! आइये आइये जाइत जाथु । ओही ज्योतिषीक विचारल ई दिन अत्यन्त सुन्दर अछि । अथवा देखू, देखू, एकटा क्यो गुणवान् लोक रास्ता धयने आबि रहल अछि । ओकरहि पुछैत छियैक । (ई कहि बटोहीक आगू जाय पुछैत छथि) – अहाँ कतय ओ किऐक आयब कतय सँ आयल छी, कोन शास्त्र पढ़ने छी, से हे द्विज ! जल्दी कहू ॥१०॥

ज्योतिषिकः—स्वदेशेषु गमिष्यामि नृपाद्धनमुपार्जितम् ।
ज्योतिःशास्त्रं मयाऽधीतं भवान् किमपि पृच्छति ॥११॥

पारिपार्श्वः—पृच्छामि किमपि ।

ज्योतिषिकः - शकुनं रक्ष ।
मद्विचारितवारेषु संप्रस्थानं करोति यः ।
वराटकं न प्राप्नोति स्वप्नेऽपि न गृहागमः ॥१२॥

पारिपार्श्वः - (विहस्य किमपि दत्वा पृच्छति) प्रद्युम्ननाम्न उत्तर दिग्गमन-
दिवसः कदा समीचीन इति कथय ।

ज्यो०— (तिथिपत्रं निरीक्ष्य) अहो ! इदानीं को मासः, कः पक्षः,
तिथिश्च का ?

पारिपार्श्वः-रे मूढ ! सर्वं यदि मयैव कथ्यं तदा त्वं किं कथयिष्यसि ? भवतु,
अद्य आषाढमासः कृष्णपक्षः पञ्चमी तिथिः गुरुवासरः ।

ज्योतिषी - अपना देश जाय रहल छी ओ राजा सँ धन उपार्जित कयने छी ।
ज्योतिषशास्त्र पढ़ने छी । अहाँ की पुछैत छी ? ॥११॥

पारिपार्श्वः--किछु पुछब ।

ज्योतिषी—सगुन राखू । हमर ताकल दिन मे जे विदा होइछ से कौड़ी
तक ने पबैत अछि ओ सपनहु मे घर नहि घुरैत अछि ॥१२॥

पारिपार्श्व—(हँसिकेँ, किछु दयकेँ पुछैत) प्रद्युम्न नामक व्यक्तिक उत्तर
दिस जयबाक दिन कहिया नीक होयत से कहू ।

ज्यो० — (पतड़ा देखि) अयँ ! एखन कोन मास, कोन पक्ष ओ कोन तिथि
छैक ?

पारिपार्श्व—रे मूर्ख ! सब यदि हमरहि कहय पड़त तँ तोँ की कहबह ?
बेस, आइ आषाढमास, कृष्ण पक्ष, पञ्चमी तिथि ओ बृहस्पति
दिन थिक ।

ज्यो०— अवगतम्, अवगतम् । परश्वो गच्छतु । त्रयोदशी तिथिर्बुधदि-
वसः भरणीनक्षत्रम्, अतिसमीचीनं दिनमस्ति । सप्तमिकचन्द्रो-
ऽपि वर्त्तते ।

(इति श्रुत्वा सर्वे तस्य गञ्जनं कुर्वन्ति)

सर्वे— रे मूढ ! त्वया किमपि न पठितम् । चौरविद्यया एतद्धनमानीत-
मिति वयं मन्यामहे । ततः कथय तथ्यम्, केनोपायेन समा-
नीतमिति ?

ज्यो०— यत् किञ्चित् पठितं तत् सर्वं विस्मृतम् । परन्तु पैशुन्ये मम
नैपुण्यमस्ति । तत्प्रसादात् पण्डितादपि शतगुणं मया प्राप्तम् ।

पारिपार्श्वः-अहो ! पैशुन्येन कथं कथं त्वया प्राप्तमिति कथय ।

ज्यो०— अहं कान्यकुब्जो ब्राह्मणः । जन्मतो यदा मम पञ्चमवर्षो व्य-
तीतः तदैव पितरौ विलयं गतौ । ततः कुत्रापि कुत्रापि भ्रमता
मया पथप्राप्त-यज्ञोपवीतं स्वहस्तेनैव कण्ठे धारयित्वा, काव्यम्
अधीत्य च काशीदेशो गतः । तत्र केनापि केनाप्युपायेन हास्य-

ज्यो०—बुझल, बुझल । परसू जाथु । त्रयोदशी तिथि, बुध दिन ओ
भरणी नक्षत्र बड़ नीक दिन अछि, सात सँ अधिक (आठम)
चन्द्रमो अछि ।

(ई सुनि सब क्यो ओकर गञ्जन करैत छथि)

सब— रे मूर्ख ! तोँ किछु नहि पढ़ने छह । चोरिविद्या सँ एतेक धन
अनने छह से हमरा सभ कैँ बुझि पड़ैत अछि । तँ कहह असली
बात, कोना केँ (ई धन) अनलह ?

ज्यो०— जे किछु पढ़लहुँ से सभ बिसरि गेलहुँ । मुदा, चुगली करबा
मे पटु छी । ओकरे प्रसादेँ पण्डितहु सँ सय गुना धन हम
पओलहुँ ।

पारिपार्श्व—अयँ ! चुगली कयकेँ कोना कोना तोँ पओलह से कहह ।

ज्यो०—हम कान्यकुब्ज ब्राह्मण छी । जन्म सँ जखन पाँच वर्ष बितल
तँ तखने हमर माय - बाप मरि गेलाह । तखन कतहु कतहु
घुमैत हम बाट पर पाओल जनेऊ केँ अपनहि हाथेँ कण्ठमे धारण

विनोदार्थं नृपसम्मानितो जातः । तस्य तु द्वारे ये केचिद् गुणिनः समागच्छन्ति तेषां मध्ये यः कोऽपि महान् दैवज्ञः तस्य निष्कासनार्थं नृपदासादीनपि द्रव्यप्रलोभेन प्रार्थयामि यत् त्वं नृपाग्रे तस्य निन्दां कुरु इति । एवं निन्दां कारयित्वा प्रपञ्चेन मया निष्कासितो यः कोऽपि पण्डितो नर्तकादि र्वा समागच्छति तस्य निवासस्थलस्य प्रथमम् अहमेव जिज्ञासां करोमि । तस्याभिप्रायं ज्ञात्वा तं प्रति वदामि 'प्राप्स्यर्धं' यदि दास्यसि तदा तव गुणो नृपाग्रे लगिष्यति' इति । कोऽपि वदति 'दास्यामी' ति । तदा मया नृपाग्रे सततं तस्य गुणवर्णनं कृतं कारितं च । एवमेवं कृते प्रचुरं धनं मया प्राप्तम् ।

पारिपार्श्वो—गच्छ, गच्छ । वयमपि च यास्यामः ।

रूप, काशीमे पढ़ि कर्नाटक देश गेलहुँ । ओतय कोनहुँ कोनहुँ उपाय सँ हास्य - विनोदक लेल राजा सँ सम्मानित भेलहुँ । हुनक द्वारपर जे केओ गुणवान् आबथि, ताहि मे जे कोनो ज्योतिषी रहथि तनिका बेलयबाक हेतु राजाक नोकरो सभकेँ रुपैया दयकेँ प्रार्थना करैत छी जे तों राजाक सामने ओकर निन्दा करह । एहि तरहेँ निन्दा कराय केँ प्रपञ्च सँ हमरा द्वारा बेलाओल जे किओ पण्डित वा नटुआ आदि अबैत छथि तनिका निवासस्थानक जिज्ञासा सब सँ पहिने हमहीँ करैत छी । हुनक अभिप्राय जानिकेँ हुनका कहैत छियनि जे आमदनीक आधा जँ हमरा दय दी त अहाँक गुण राजाक लग जायत' । ओ कहैत छथि—'देब' । तखन हम राजाक आगू हरदम हुनक गुणवर्णन करय ओ करावय लगलहुँ । एहिना कयला पर पर्याप्त धन पओलहुँ ।

पारिपार्श्वो—जाह जाह । हमरा सभ आइये जायब ।

(इत्युक्त्वा सर्वे निष्क्रान्ताः)

इति श्री भानुनाथदैवज्ञ-विरचिते प्रभावतीहरणप्रबन्धे द्वितीयोऽङ्कः ॥

अथ तृतीयोऽङ्कः

(ततः पथि श्रीकेदारनाथं प्रणम्य स्तुवन्ति । यथा —)

जय जय महादेव ! श्रीमहेश्वर ! सिंहवाहिनीश ! समीपगत-श्रीबदरीनाथ ! सकललोकैकनाथ ! श्रीमदात्माराम ! शर्मदायक ! विद्यागुणगायक ! श्रीमन्मुरलीकाल - गोपाल - पालनोदारमानस ! श्रीनन्दीकारित - शुभगमनविशारद ! गजमानद ! श्रीरघुपति - परिपूजित - पादपल्लव ! अभिनवकृपा-

---

(ई कहि सभ बाहर भय गेलाह)

इति श्री भानुनाथ दैवज्ञक बनाओल प्रभावतीहरण नामक प्रबन्ध मे (कृति मे) द्वितीय अङ्क समाप्त भेल ।

तृतीय अङ्क

(तखन बाटमे नटवेषधारी प्रद्युम्नादि कुमार श्रीकेदारनाथ केँ प्रणाम कय स्तुति करैत छथि —)

जय जय महादेव ! श्रीयुक्त महान् ईश्वर (कविक आश्रयदाता श्री महेश्वर सिंहक नाम आपाततः लेल अछि) ! सिंहवाहिनी (पार्वती)क पति ! श्री बदरीनाथ भगवानक नजदीक मे रहनिहार ! (बदरीनाथधाम केदारनाथ सँ समीपहि अछि), सभ लोकक एकमात्र स्वामी ! श्री सम्पन्न आत्मा मे रमण करनिहार ! कल्याण देनिहार विद्याक गुण गओनिहार ! श्री मुरलीक बज-औनिहार गोपालक पालन मे उदार चित्तवला ! श्रीनन्दीक (महादेवक प्रधान

कटाक्ष - निरीक्षित - श्रीगणेश ! निजमूर्ति - संस्थापित ! श्रीभानुनाथदैवज्ञ-मनोरथपूरक ! कुशलकारक ! निष्कलुषदयासागर ! धर्मधुरन्धर ! प्रसीद, प्रसीद ।

(ततो वज्रपुरे वज्रनाभ - सुनाभ-प्रवेशनार्थं गीतखण्डः)

गीत सं०—१०

वज्रनाभ सुनाभ मिलिजुलि कयल मञ्च[१] वेश यो ।
जनिक लक्ष्मी निरखि मञ्जित पड़ल धनद[२] सुरेश यो ॥
परम पुलकित नट विलोकथि सुनथि मनदय गान यो ।
मनि परसमनि[३] अछल जत धन कयल सरवस दान यो ॥

वज्रनाभ-सुनाभौ - रे रे नर्त्तकाः ! यूयं समीचीनं नृत्यथ । इदानीं निवासं कुरुत । पुनः द्रक्ष्यामः (इति निष्क्रान्तौ) ।

(हंसी तु प्रभावती - समीपं गत्वा वदति)

सेवकक) द्वारा कराओल गेल शुभ गमन (यात्रा) मे पटु ! (भक्त कें प्रधान देनिहार ! श्री रामचन्द्र क द्वारा पूजित पाएर रूपी पल्लववला ! नवीन कृपा-पूर्ण दृष्टिक कोर सँ श्री गणेशकें देखनिहार ! अपन मूर्ति कें स्थापित कय-निहार ! श्री भानुनाथ दैवज्ञक मनोरथकें पूरा कयनिहार ! (भक्त कें) कुशल रखनिहार ! निर्मल दयाक समुद्र ! धर्मक रक्षा मे अग्रणी ! अहाँ प्रसन्न होउ, प्रसन्न होउ ।

(तखन वज्रपुर मे वज्रनाभ ओ सुनाभक प्रवेशक हेतु गीतखण्ड—)

गीत सं०—१०

१—मञ्च पर । २—कुबेर ओ इन्द्र । ३- मणि ओ स्वर्णमणि ।

वज्रनाभ सुनाभ - रे रे नटुआ सभ ! तों सभ बड़ नीक नचैत छें । एखन निवास करह (रहि जाह) । फेर देखबह । (ई कहि बाहर भय गेल) ।

(हंसी प्रभावतीक लग जाय बजैत अछि)

हंसी - हे सखि ! स पुरुषः समागतः ।

प्रभावती - कुत्र कुत्र ? मां दर्शय । (इति सहर्षं भूयो वदति) ।

हंसी - अद्य प्रदोष-समये त्वां दर्शयिष्यामि । (इति बहुकालम् उत्तर-प्रत्युत्तरं कृत्वा रङ्गभूमौ च गत्वा भ्रमररूप-प्रद्युम्नसहितां पुष्प-मालां च संगृह्य प्रभावतीं परिधाप्य वदति ।) हे सखि ! अ-चिरेणैव कालेन तं पश्यसि ।

प्रभावती—हरि, हरि !! कदा पश्यामि । (इत्युक्त्वा गीतेन कथयति)—

गीत सं०—११

सुनिअ वचन सखि ! मन दय हे, न करु कतहु परगास[१] ।
पचशर[२] विदित जगतभ र हे, शतशर[३] मोहि प्रतिभास[४] ॥
पड़लहुँ विरह - पयोनिधि[५] हे, कोन विधि उतरब पार ।
एकहि नगर विश्लेषित[६] हे, समुचित न थिक विचार ॥
जइओ स्वगृह परितेजल हे तइओ ने मन अवधार[७] ।

हंसी - हे सखी ! ओ पुरुष आबि गेलाह ।

प्रभावती - कतय कतय ? हमरा देखबाह । (प्रसन्नतापूर्वक बारंबार बजैत छथि) ।

हंसी— आइ मुनहारि साँझखन अहाँकें देखायब । (एहि तरहें बहुतकाल धरि बातचीत कयकें रङ्गभूमि (नाट्यशाला) जाय भौंराक रूपमे प्रद्युम्न सँ युक्त फूलक माला लय प्रभावती कें पहिराय बजैत अछि) हे सखी ! थोड़बे काल मे हुनका देखब ।

प्रभावती—हाय, हाय !! कखन देखब । (ई कहि गीतक द्वारा कहैत छथि)—

गीत सं०—११

१ = प्रकाशित । २ - पञ्चशर (पाँच शरवला) रूपें संसार भरि मे प्रसिद्ध । ३ - सय शरवाला । ४—बुझि पड़ैत छथि । ५ - विरह - समुद्र । ६ - विश्लेषित = वियुक्त । ७ = विचार ।

निरधन कतहु न बाओल हे, परल परसमनि[8] भार ॥
सपनहुँ हुनक समागम हे जेहो छनि देखति निहारि ।
भोर लेलें एहि[9] जगतो लल हे, सेहो थिकि गुनमति नारि ॥
कि करत नक्षत-बरागन[10] हे, सुदिन न रहुअ सदाय[11] ।
छन-छन प्रबल मनोभव[12] हे, कह सखि जिबन उपाय ॥
भानुनाथ भन मन गुनि हे, अचिरहिँ मिलत सयान[13] ।
महेश्वर सिंह मिथिलापति हे, जेहि विधि कए नित दान ॥

(ततो विदूषकः - हे नायकाः ! पुनः प्रभावती गीतेन कथयति -)

गीत सं० - १२

एकसरि कोन परि खेपब सजनी, सुरतम यामिनि याम[1] ।
कत-कत हृदय निरोधब[2] सजनी, कतहु न लेल बिसराम[3] ॥
जतेक अछल गुन-गौरव सजनी, तनि बिनु सब दुरि गेल ।
कि कहब अपन करम फल सजनी तइओ न दरसन भेल ॥
काहि कहब दुख के सुख सजनी, सपनहु बिसरल हास ।
कतेक जतन करु शशि[4] बिनु सजनी, कुमुदो न होअ परगास ॥
जइओ अनेक शपथ[5] कए सजनी, के कर पुरुष-परमान ।
भिजओ बरष लाख सागर सजनी, कोमल न होअ पषान[6] ॥

८-स्पर्शमणि (पारस) । ९ - संसार भरि मे । १० - नक्षत्र ओ शुभदिन (दिन-बेरागन) । ११ - सदा (सतत) । १२ - कामदेव । १३ - चतुर नायक ॥

(तखन विदूषक - हे नायक सभ ! फेर प्रभावती गीत द्वारा कहैत छथि ।)

गीत सं० - १२

१ - रातिक पहर । २ - रोकब । ३ - विश्राम । ४ - चन्द्रमाक बिना कुमुद नहि फुलाय सकैछ । नायिकाक हँसब ओ कुमुदक फुलायब मे दृष्टान्त । ५-पुरुष शपथो खयताह तइयो हुनक विश्वास के कय सकैछ । ६ - पाथर । पाथर कतेको वर्ष समुद्र मे भिजलो पर कोमल नहि होइछ, तहिना शपथो कयला पर पुरुष विश्वस नीय नहि थिक ।

इहो अछि जगत बेआपित[7] सजनी, सुनिअ वचन अनुपाम ।
जँओ पुनु प्रेम विरस[8] होअ सजनी, परिदेवन[9] परिणाम ॥
भानुनाथ भन मन गुनि सजनी, कमअ हृदय अभिराम[10] ।
महेश्वर सिंह रस-बिन्दक[11] सजनी, पुरथि सकल मनकाम ॥

(इति गानोतरं प्रद्युम्नः प्रत्यक्षोऽभूत् ।)

हंसी - हे सखि ! पश्य, अयमेव प्रद्युम्नः ।

(प्रभावती तु सलज्जा अधोमुखी भवति । हंसी पटान्तं धृत्वा किञ्चित् तिर्यग् अवेक्षयति । प्रद्युम्नस्तु गीतेन कथयति —)

गीत सं० - १३

रमनि[1] हे ! एहन न करिअ गेआने ।
बिधिबश[2] एक समाज आज भेल, ततय लाज अपमाने ॥
सहस सुधानिधि-सार[3] गारि लेल, बिहि[4] सिरजल मुख तोहि ।
तनिक[5] बिकास आश बिसवासल, मन चकोर[6] जनि मोहि ॥
कतन जतन परितेजल अपन जन, अयलहुँ शरण सुख जानि ।
तइओ बिमुख जँओ करि शरणागत, गुनमति ! थिक बड़ हानि ॥

७ - व्याप्त । ८ - रसक हानि । ९ - दुःख ।
१० - सुन्दर (प्रसन्न) । ११ - रसकें प्राप्त करनिहार ।

(एहि गीतक बाद प्रद्युम्न प्रत्यक्ष भेलाह ।)

हंसी - हे सखी ! देखु, इएह प्रद्युम्न थिकाह ।

(प्रभावती तँ लाजेँ मूड़ी नीचाँ कय लैत छथि । हंसी हुनक घोघ पकड़ि कें कनेक तिरछी नजरि सँ देखबैत अछि । प्रद्युम्न गीत द्वारा कहैत छथि -)

गीत सं० - १३

१ - सुन्दरी । २ - संयोग सँ । ३ - चन्द्रमाक रस । ४ विधाता । ५-चन्द्रमाक स्वरूप सँ बनल मुँहक प्रकाशित होयबाक आशाक विश्वास सँ युक्त । ६ - हमर मन रूपी चकोर ।

रहओ जगत कत विमल सरोवर चातक[7] नहि उपयोग ।
जलधर बुन्द भरोस जीअतहु[8], करथि कलेवर[9] भोग ।।
दादुल मोर[10] सोर समुचित कए, बिजुलि - विराजित मेह[11] ।
एखनुक समय रभस दौं बुधजन, न कह तथिहु[12] सन्देह ।
भानुनाथ भन सुनु वर यौवति । कए सुवचन सनमान ।
सकल नृपति - पति मिथिला - महीपति महेश्वर सिंह सुजान ।।

(ततः प्रभावती वदति हंसी प्रति)

प्रभावती - हे सखि ! कथय इमम्, किन्तु इदानीं गच्छतु । यदि कोऽपि ज्ञास्यति तदा पित्रादिभिर्गञ्जिता भविष्यामि ।

प्रद्युम्नः - (स्वयमेव श्रुत्वा वदति गीतेन) :-

गीत सं० - १४

भाविनि[1] ! पुरु मोर आसे । बहुजन[2] याचक न कर उदासे ।।
अभिनव प्रेम अमोले[3] । किअ पट अन्तर[4] रचिअ कपोले ।।
जीओ तरु[5] कुटिल कुसारे । उपगत लत[6] नहि करथि विचारे ।।
जगत कुसुम कत रङ्गे । मधुकर[7] न बेजय कमलिनि सङ्गे ।।

---

७ - चातक पक्षी पोखरिक पानिक उपयोग नहि करैछ । ८ - जीवित रही ।
९ - शरीरक । १० - मयूर । ११ - मेघ । १२ - ताहू मे ।

(तखन प्रभावती हंसी कें कहैत छथि ।)

प्रभावती—हे सखि ! हिनका कहियनु, परन्तु एखन ई जाथु । जौं केओ बुझि जायत तौं पितालोकनिक द्वारा गञ्जन पाएब ।

प्रद्युम्न - (स्वयं सुनि गीतक द्वारा कहैत छथि)--

गीत सं० - १४

१ - हावभाववाली । २ - पैघलोक । ३ - अमूल्य । ४ - कपड़ाक तर मे गाल कें कियेक रखने छी । ५ - गाछ टेढ़ ओ असारो रहय ।
६ - समीप आयल लत्तीक प्रति तारतम्य नहि करैत छथि (अर्थात् आश्रय दैत छथि ।) ७ - भौंरा ।

भेलहु सोहर आवे दासे । वचन सुधारस[8] कह परगासे ।।
भानुनाथ कवि भाने । मिथिला - महीपति नव रस जाने ।।

हंसी—हे प्रद्युम्न ! देशकालं ज्ञात्वा गान्धर्व-विवाहेन इमां गृहाण । तत्स्वीकारम् इयमपि करोतु ।

(इति श्रुत्वा प्रद्युम्नः यवनिकान्तरे गान्धर्व-विवाहं कृत्वा तस्याः करञ्च धृत्वा शयनगृहं गच्छेत् । तत्र पात्रेण-गीतम्):--

गीत सं०--१५

चलल[1] शयनगृह मनमथ रे, नागरि[2] कर लागी ।
जलद बिजुलि[3] जनि विचलल रे, निज-निज तनु भागी ।।
सुमन सुवासल[4] परिहन[5] रे, कुसुमित[6] वर चीरे ।
भावित गीत ललित पद रे, तेहि गगन गम्भीरे ।।
सिन्दुर रेह चिकुरबिच[7] रे, अनुकूल अकारे ।
उपगत भेल यमुना बिच रे, जनि भारति[8] धारे ।।

---

८ - अमृतक रस ।

हंसी हे प्रद्युम्न ! देश ओ कालकें बुझि गान्धर्व-विवाह (प्रेमविवाह) सौं हिनक ग्रहण करु । तकरा इहो स्वीकार करथु ।

(ई सुनि प्रद्युम्न परदाक भीतर मे गान्धर्व-विवाह कयकें हुनक हाथ धय शयनक घर केलिगृह) जाथि । तखन नाटक गीत (बटगवनी)—)

गीत सं०—१५

१ - प्रद्युम्न । २ - चतुर नायिका । ३ - मेघ मे जेना बिजलोका उठैछ तहिना अपन अपन देहक शोभा पओलनि ।
४ - सुगन्धित । ५ - परिधान (वस्त्र) । ६ - फुलायल (छपुआ) उत्तम वस्त्र । ७ - केशक बीच मे सिन्दूरक रेखा ।
८ - सरस्वतीक धार (लाल रंगक) यमुनाक धारक बीच मे जनि गेल ।

नवल वसन शिर शोभित रे युत श्यामल गाले ।
नागरि पग[9] नुपुर रव रे, जनि पुरथि ताले ॥
हृदयिक प्रेम वेकत[10] करु रे, कर पल्लव जोरी ।
नागरि विहुँसि विहुँसि रहु रे, अभिनत कय कांती[11] ॥
भानुनाथ कह मन गुनि रे, वलि नृपक समाजे ।
पावथु सतत एहन सुख रे, मिथिलापति राजे ॥

(ततः सुनाभपुत्र्यौ चन्द्रवती - गुणवत्यौ प्रविश्य वदतः)

चन्द्रवती गुणवत्यौ - हे प्रभावति ! तवाधरस्य वैरूप्यं दृश्यते । वक्षःस्थलेऽपि नखक्षतादिकमुपलभ्यते । यथा केनापि पुरुषेण त्वं रमिताऽसि तथा मां प्रतिभाति । कथय सख्यं, केन त्वं रमिताऽसि । यदि न सख्यं वृत्तं कथयिष्यसि तदा पितरौ वदावः ।

प्रभावती—हे सख्यौ ! एका विद्या ममास्ति । तद्विद्याभ्यासेन एकं महासुन्दरं देवपुत्रमाकर्षयामि । तेन सह यादृशं सौख्यमभूत् तदनिर्वचनीयम् । तथापि किञ्चिद् वदामि—

---

९ - पाएर मे नूपुरक शब्द । १० - व्यक्त । ११ - कान्ति ।

(तखन सुनाभ क दुनू बेटी चन्द्रवती-गुणवती प्रवेश कय बजैत अछि)

चन्द्रवती-गुणवती—हए प्रभावती ! तोहर ठोर वेदरङ लगैत छह । छातिओ पर नहक चेन्ह छह । कोना कोनो पुरुषक संग तों रमण कयने छह तहिना हमरा बुझि पड़ैत अछि । कहह असली बात ककरा संग तों रमण कयलह अछि । जों असली बात नहि कहबह तों माय - बाप कें कहि देबह ।

प्रभावती—हे दुनू सखी ! एकटा विद्या हमरा अछि । ताहि विद्याक अभ्यास सँ एक महासुन्दर देवपुत्र कें आनि लैत छी । तनिका संग जेहन सुख भेल से कहबाक योग्य नहि, तथापि किछु कहैत छी गीतक द्वारा -

गीत सं०--१६

कि कहब आहे सखि ! तनिक सिनेहा ।
करै छथ लय चलु कुतूहल - गेहा[1] ॥
अङ्कम[2] भरि भरि शयन निवासे ।
मधुर वचन कह कत परगासे ॥
रचित चिकुर विघटित[3] कय देला ।
अधर अमिअ[4] पिबि पुलकित भेला ॥
अञ्चल परिहरि कयल निज काजे ।
चन्द्र - सहित जनि शम्भु[5] विराजे ॥
निवि[6] विश्लेषित बुझ अनुमाने ।
तखनुक विधि मोहि न रहु गेआने ॥
भानुनाथ कवि भन परमाने ।
महेश्वर सिंह नृप सभ रस जाने ॥

चन्द्रवती-गुणवत्यौ - हे सखि ! आश्चर्यमेतत् ! कथं देवपुत्रेण जुगुप्सितं कर्म कृतम् ? देवस्य तु तपसि एवानुराग इति श्रुतमस्ति ।

प्रभावती - हे सख्यौ ! युवामपि तां विद्यां गृह्णीतम् । युवयोरपि वशे देवपुत्रौ आगमिष्यतः ।

गीत सं० - १६

१ - कौतुकगृह । २ - कोरमे । ३ - खोलि देल । ४ - अमृत ।
५ - स्तन रूपी शम्भु (शिवलिङ्ग)पर मुहरूपी चन्द्र । ६ - कटि प्रदेश मे वस्त्रक गाँठ खुजि गेल ।

चन्द्रवती गुणवती—हे सखि ! ई आश्चर्य थिक ! कोना देवपुत्रक संग गुप्त-रूपें गुप्त कर्म कयलहुँ ? देवताकें तँ तपस्ये मे अनुराग होइत छनि ई सुनल अछि ।

प्रभावती—हे दुनू सखी ! अहूँ दुनू गोटा ओहि विद्याकें ग्रहण करु । अहूँ दुनूक वश मे दू टा देवपुत्र आओताह ।

(इति श्रुत्वा चन्द्रवती-गुणवत्यौ तां विद्यां प्रभावतीमुखात् संगृह्य प्रजेपतुः । ततः साम्बगदौ नटाख्यादात्मस्य प्रत्यक्षौ बभूवतुः । ततः सर्वे जवनिकान्तरे तयोरपि गान्धर्वविवाहं कारयित्वा शयन-गृहं प्रस्थाप्य पार्श्वगीतं गायन्ति ।):--

गीत सं० — १७

आज देखल पथ कामिनि रे, दामिनि सम[1] रूपे ।
चन्द्रवदनि[2] मृगलोचनि रे, रति परम अनूपे ॥
कुन्तल[3] रुचिर विराजित रे, मुखमण्डल पाए ।
अमिअ[4] लोभ शशि चौदिश रे, फणि रहु लपटाए ॥
अधर दसन[5] छवि कि कहब रे, अनुपम तसु कांती[6] ।
नव दल[7] निकट बैसाओल रे, दाड़िम-बिज पांती ॥
कनक-लता भुज उपमित रे, कुचयुग निरमाई ।
मदन जगत जिति राखल रे, दुन्दुभि[8] उलटाई ॥
जघन उपर रोमावलि रे, छवि कुम्भ सगोपे ।
नृपुन[9] नीति जनु बिसरय रे, लत मनमथ[10] रोपे ॥

(ई सुनि चन्द्रवती ओ गुणवती ओहि विद्या कें प्रभावतीक मुँह सँ लयकें जपलनि । तखन शाम्ब ओ गद नाचघर सँ आबि कें प्रत्यक्ष भेलाह । तखन सभ परदाक भीतर मे ओहू दुहुक गान्धर्व विवाह कराय शयनगृह मे दय बटगबनी गबैत छथि ।)

गीत सं - १७

१ - बिजुरीक सनक रूप । २ - चन्द्रमाक सन मुँहवाली । ३ - केश । ४ - अमृतक लोभें चन्द्रमाक चारूभर साँप लपटायल अछि । ५ - दाँत । ६ - कान्ति । ७ - नवका पात (पल्लव) ८ - ढोल । ९ - गुप्त खजाना । १० - कामदेव रोमावलि-रूपी लतीकें रोपलनि ।

भानुनाथ भन मन दय रे, कत कयल बखाने ।
कवि-गुन बुझथु नृपति आबे रे, अपनहिं अनुमाने ॥

(इति गानोत्तरं निष्क्रान्ताः सर्वे ।)

इति श्रीभानुनाथ दैवज्ञ - विरचिते प्रभावती हरण-- प्रबन्धे तृतीयोऽङ्कः ॥

अथ चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविश्य रक्षको वदति,

रक्षकः—हे दैत्यराज ! एते नटाः भवद्‌गृहदूषकाः । अतः सर्वेषां शासनं कारयित्वा निष्कासनं कुरु ।

वज्रनाभः—रे रे दौस्साधिक ! सत्यं वदसि । इदानीमेव ममानुचरा गच्छन्तु । तान् गृहदूषकान् निघ्नन्तु ।

(एहि गानक बाद सभ बहार भय जाइत छथि ।)

इति श्रीभानुनाथ दैवज्ञक बनाओल प्रभावती हरण प्रबन्ध मे (प्रबन्ध = रचना) तृतीय अङ्क समाप्त ।

चारिम अङ्क

(तखन प्रवेश कयकें रक्षक कहैत अछि)

रक्षक—हे दैत्यराज ! ई नट सभ अपनेक घर कें दूषित करैत अछि । तें सभक शासन कराय बैलाउ ।

वज्रनाभ—रे रे दुस्साधक पुत्र ! सत्ते कहैत छें । एखनहिं हमर नोकर सभ जाओ, ओहि घरकें दूषित करनिहार सभ कें मारि देथओ ।

रक्षकः - हे दैत्यराज ! नहि अनुचरसाध्यमेतत् अत्यन्त-युद्धशौण्डाः ।

(ततो दैत्यराजो गर्वेण विहस्य सुनाभ - सहितः स्वकीयसन्नहनं करोति ।)

(इति श्रुत्वा प्रद्युम्न-गद-शाम्बाः स्वस्वपत्नी-दत्त-करवालाः सन्नः स्थिता बभूवुः । तत ऐरावतारूढो महेन्द्रस्तत्र संगत्य गजं शाम्बाय दत्वा स्थितो बभूव । एवं श्रीकृष्णः प्रद्युम्नाय गरुडं चक्रं च ददौ । तथा जयन्तश्च रथं गदाय अददत् ।)

(तत्र वज्रनाभो वदति)

वज्रनाभः - रे नटवेषधारिणो मद्गृहदूषकाः ! अद्य मद्बाणविभिन्नगात्राः क्व यास्यथ ?

(ततः प्रद्युम्नः सक्रोधं वदति)

रक्षक - हे दैत्यराज ! नोकरक बुते ओ नहि सम्हल जायत, ओ सभ युद्ध करबा मे पटु अछि ।

(तखन दैत्यराज गर्व सँ हँसिकेँ सुनाभ सहित अपनाकेँ युद्धक हेतु सजबैत अछि ।)

(ई सुनि प्रद्युम्न, गद ओ शाम्ब अपना पत्नीक देल तरुआरि लय ठाढ़ भय गेलाह । तखन ऐरावत पर चढ़ल इन्द्र ओतय पहुँचि शाम्बकेँ हाथी दय बैसि गेलाह । एहिना श्रीकृष्ण प्रद्युम्नकेँ गरुड़ ओ चक्र देलथिन । तहिना जयन्त (इन्द्रक पुत्र) गदकेँ रथ देलथिन ।

(ओतय वज्रनाभ बजैत अछि)

वज्रनाभ - रओ नटवेषधारी सभ ! तों सभ हमर घर केँ दूषित कयने छह, आइ हमर बाण सँ जखन देह छिन्नभिन्न भय जयतह तँ कतय जयबह ?

(तखन प्रद्युम्न क्रोधपूर्वक बजैत छथि)

प्रद्युम्नः—रे रे दैत्याधिराज ! त्वमिह समरगः सन्धिया खर्वगर्वी धत्से, किन्न श्रुतं ते शिशुवयसि मया पातितः शम्बरोऽभूत् ।
पुत्रोऽहं दानवारेर्धवलित - यशसः सन्निमित्तं विचार्य
द्राग् दोर्दण्डातिचण्डश्रममपि निखिलं दर्शय भ्रातृवर्गैः ॥१३॥

(ततो वज्रनाभो विहस्य वदति)

वज्रनाभः—पिता ते यवनत्रस्तो मुचकुन्दमधिश्रितः ।
महीतले भवानेव गुणगाम्भीर्यभाजनम् ॥१४॥

प्रद्युम्नः—अलमुत्तरितेन को विचारः
कुरु मौर्वीमधिमार्गणं गुणज्ञ !
ननु चक्रमिदं मदीयपाणौ
कियदारभ्य दिवागणं बुभुक्षुः ॥१५॥

प्रद्युम्न - रे रे दैत्याधिराज ! तों एहि युद्धमे आबिकेँ सभतरहेँ तुच्छ गर्वक धारण करैत छह । मुदा की तों ई नहि सुनने छह जे बाल्यावस्थहि मे हम सम्बर नामक दैत्यकेँ पछाड़ने छी, हम निर्मल यशस्वी दनावक अरि (श्रीकृष्ण) क पुत्र छी ? ई सभ विचारि अपन बन्धुवर्गसहित झटदय बाहुक्षी सबल श्रम वा कौशल देखाबह ॥१३॥

(तहि पर वज्रनाभ हँसि बजैत अछि)

वज्रनाभ - तोहर पिता यवनक डरेँ मुचकुन्द नामक मुनिक आश्रय लेलथुन्ह, एहि तरहेँ एहि पृथ्वीपर गुण ओ गम्भीरताक पात्र तोंही छह (अर्थात् नहि छह) ॥१४॥

प्रद्युम्न - निरर्थक उतराचोरी सँ की विचार भय सकैछ, रे हे गुणज्ञ ! धनुष पर डोरी चढ़ाउ । हमर ई चक्र निश्चय हमरा हाथेमे कतेको दिनसँ लय बहुतो दिनक भुखायल अछि ॥१५॥

(ततः प्रद्युम्न - वज्रनाभयोः शाम्ब - सुनाभयोः गद—दैत्य-सैन्ययोश्च तुमुल युद्धमभवत् ।)

(तत्रैव युद्धे प्रभवति अशेषनर्तका गीतं गायन्ति ।)

गीत सं० - १८

गरुड चढ़ल शारङ्गधर[१] आयल, चक्रसुदर्शन हाथे ।
वाहन आयुध[२] सौंपल मकरध्वज[३], युद्ध विलोकथि साथे ॥
कि आरे ॥ध्रु०॥
वासव[४] निज गजराज विराजित रथ पर राज जयन्ता ।
ओहि गति यादव-युगल[५] चढ़ाओल वैसल जाय दुरन्ता[६] ॥
दानव दल अनलेख[७] देख पर समर रुधिर बहुधारा ।
जयजयकार पड़ल यादव विच सुरगण आबि निहारा ॥
सौध[८] गवाक्ष हेर युवती-जन कि करथ तकर विचारा ।
फोड़ि पहाड़ चन्द्र[९] जनि निकसल दिवस जानि अन्हिआरा ॥
भानुनाथ भन सुनिअ वीरजन जेहि विधि जितल सुरेशा ।
तेहि विधि जितथु सकल-रिपुमर्दक[१०] महेश्वर सिंह नरेशा ॥

(ततः प्रद्युम्नादयो दैत्यान् विजित्य शङ्खध्वनिपूर्वकं रणभूमि संपूज्य स्वस्वपत्न्या सह उपविष्टा बभूवुः ।)

(तकर बाद प्रद्युम्न ओ वज्रनाभक, शाम्ब ओ सुनाभक तथा गद ओ दैत्यसेनाक भयानक युद्ध भेल ।)

(ओहीठाम युद्ध होइतकाल सभ नर्तक गीत गबैत अछि)

गीत सं० - १८

१ - श्रीकृष्ण । २ - आयुध = शस्त्र (श्रीकृष्ण अपन वाहन ओ शस्त्र प्रद्युम्न कें देल) । ३ - प्रद्युम्न । ४—इन्द्र । ५—प्रद्युम्न ओ शाम्ब । ६—अजेय । ७—असंख्य । ८—कोठाक खिड़की सँ । ९—दैत्यरूपी पहाड़कें फोड़ि (मारि) कें प्रद्युम्न रूपी चन्द्रमा उगलाह । १०—सभ शत्रु कें दमन कयनिहार ॥

(तकर बाद प्रद्युम्न आदि यादव दैत्यकें जीति शंख बजबैत रण-भूमिक पूजा कय अपन अपन पत्नीक संग बैसलाह ।)

(तत्र विदूषकः)—हे नर्त्तकाः ! वयं विधिं कुर्मः । भवन्तो माङ्गल्यगीतं गायन्तु ।

(ततः पारिपार्श्वादयो गायन्ति)

गीत सं०—१९

आजु माइ निरखहु छवि यदुवर को ॥ध्रु०॥
गौरि सहित जनि त्रिभुवन-सुन्दर
बेवत[१] रूप भउ हर को ।
प्रथम सोहाग कुसुम मन्दारक[२]
सुरपति देल निजकर[३] को ॥
हीर जमाहिर मिलल परसमनि
पड़ल जनक गिरिधर[४] को ।
लछिम सरस्वति करथि चुमाओन
पढ़ित वेद निरजर[५] को ॥
गान करत गन्धर्व यक्षगण
नटत वधू तसु घर को ।
भानुनाथ मिथिलेश—प्रेम—वश
गावत यश पचशर[६] को ॥

(तत उत्थाय श्रीप्रद्युम्नादयः पत्न्या सह इन्द्रोपेन्द्रादीन् प्रणम्य स्थिता बभूवुः ।)

(विदूषक)—हे नटआलोकनि ! हमसभ विवाहक विधि करैत छी । अहाँ सभ मंगल गीत गाउ ।

(तखन पारिपार्श्व आदि गबैत छथि)

गीत सं०—१९

१—व्यक्त । २—देवपुष्पक सोहाग देलथिन । ३—अपना हाथें । ४—पिता श्रीकृष्णक द्वारा सोहाग में हीरा जमाहिर आदि पड़ल । ५—देवतालोकनि वेदपाठ कयल । ६—कामदेवक ।

(तखन उठिकें प्रद्युम्न आदि अपन पत्नीक संग इन्द्र उपेन्द्र(कृष्ण) आदि कें प्रणाम कय ठाढ़ भय गेलाह ।)

(तत्र सूत्रधारः)—हे मर्त्तकाः ! श्रीभानुनाथकवेः नृत्ये देवप्रार्थनावाक्यं शृणुत ।—

श्रीमद् राज-महेश्वरः स्मितमुखः पुत्रैश्चिरं जीवतु,
राज्यं तस्य विवर्धतां, पिशुनवाक् कर्णे वृथा गच्छतु ।
आनन्दन्तु प्रजास्तु, शुद्धमनसाऽस्मिन् नाटके हृष्यतु
प्रत्यक्षं प्रचुरार्थदो बहुदयां कृत्वा च मां पुष्यतु ॥१६॥

विदूषकः—हे नायक ! श्लोकार्थं गीतेन कथय ।

(सूत्रधारः गीतेन कथयति) :—

गीत सं० — २०

सुनिअ सभासद हमर विनति पद
जे बसु[1] नृपक समाजे ।
चिरजिवि जितथु तनय सङ हरषित
श्रीमिथिलापति—राजे ॥

(ततय सूत्रधार)—हे नटआसभ ! श्री भानुनाथ कविक नृत्यमे (नाटकमे) राजाक प्रार्थना करयबला वाक्य सुनु—

श्रीमान् राजा महेश्वर सिंह प्रसन्नवदन भय पुत्रसभक सङ चिरजीवी होथु । हुनक राज्य बढ़न्हु । हुनक कानमे पिशुनक (चुगिलाक) बात व्यर्थ होअओ । हुनक प्रजासभ आनन्दित रहथु । ओ स्वयं विशुद्धमन सँ एहि नाटक देखबा मे आनन्दित होथु । तथा स्पष्ट प्रचुर धन देबा मे समर्थ बहुत दया कयकेँ हमरा (कविकेँ) पुष्ट करथु (पोसथु) ॥१६॥

विदूषक—हे नायक ! श्लोकक अर्थ गीतक द्वारा कहू ।

(सूत्रधार गीतक द्वारा कहैत छथि)—

गीतसं० — २०

१ - बसैत छथि ।

बढ़उन्हि हुनक राज भूमि चउगुन
दिन—दिन मङ्गल भारे ।
पिशुनक[2] वचन श्रवण जनु लाबथि
करइत सुपद विचारे ॥
मोदित रहथुन्हि सतत प्रजागन
रचथु सुजन सह वासे ।
नाटक अपन सराहथु मन दय
जें जग होअ परगासे[3] ॥
कविक मनोरथ पुरथु सुमति भय
गुन बुझि करथु सम्माने ।
जगत - विदित बहुतर धनदायक
करुणा कय मोहि दाने ॥
भानुनाथ कह सुकृत पदारथ
हृदय राखि जगमाता[4] ।
मिथिल—महीपति महेश्वरसिंह जिउ[5]
होथु सतत सुखदाता ॥

(ततः कवेः भक्तिसूचकश्लोकं सूत्रधारः पठति यथा—)

ब्रह्मा यत्र विदूषकः, कमलया युक्तोऽभिनेता हरिः,
वादित्रं च सरस्वती कलयति, श्रीचण्डिका नायिका ।

२- चुगिलाक । ३—प्रकाशित । ४—जगमाता भगवतीकेँ ।
५ - महेश्वर सिंहजी ।

(तकर बाद कविक भक्ति सूचक श्लोककेँ सूत्रधार पढ़ैत छथि । जेना—)

जतय ब्रह्मा विदूषक बनैत छथि, लक्ष्मी सहित विष्णु अभिनेता (नाटकक पात्र) बनैत छथि, सरस्वती बाजा बजबैत छथि, श्रीचण्डिका भगवती नायिका (प्रमुख स्त्रीपात्र) बनैत छथि, तीनू लोकक स्थल रङ्गमञ्च (स्टेज) होइत अछि—एहन व्यापक

त्रैलोक्यस्थलमेव रङ्गरचना, तस्मिन् विभोस्ताण्डवे
दास्याय द्रुतपारितोषिकमहं स्वात्मानमभ्यर्पये ॥१७॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

॥ इति चतुर्थोऽङ्कः ॥

इति श्रीभानुनाथ दैवज्ञ विरचितं प्रभावतीहरणं नाम
त्रोटकं सम्पूर्णम् ॥

विचित्र पद विन्यास-रचना सरसा कवेः ।
बुधो यदि पुरोवर्ती न कुजन्मा पुरस्थितः ॥१८॥
भारती भानुनाथस्य भारतीव चमत्कृता ।
भारतेनैव धीरेण दर्शनीया प्रयत्नतः ॥१९॥

महादेवक ताण्डव नृत्य मे टहलू बनबाक लेल हम अदय पारितोषिक (पुरस्कार) मे अपनाकें अर्पित करैत छी ॥१७॥

चारिम अंक समाप्त ॥

इति भानुनाथ दैवज्ञक बनाओल प्रभावतीहरणनामक
त्रोटक समाप्त भेल ॥

जौं विद्वान् आगू मे रहथि, नीच व्यक्ति नगर भरि मे नहि रहय तँ चमत्कारयुक्त पदविन्यासवला रचना सरस कहबैत अछि ॥१८॥

भानुनाथ कविक वैदुष्यपूर्णवाणी सरस्वती जकाँ चमत्कृत अछि जे प्रतिभावान् (वा प्रतिभा मे रत) विद्वानकें प्रयत्न पूर्वक देखबाक चाही ॥१९॥



भानुनाथक स्फुट गीत

चढ़ल चैत ऋतुराज, आज नहि यदुपति हो ।
हो रे, निबहब सखिक समाज, आज हम कोन गति हो ॥

फुलल कुसुम घनघोर, सोर पिकगन कर हो ।
भमर भमय चहु ओर जोर मनमथ • सर हो ॥

उपजल मदन • तरङ्ग, अङ्ग कत कि कहब हो ।
कोन परि एहि मन भङ्ग, सङ्ग बिपु निबहब हो ॥

ओहि देस जनि रतिकन्त, सन्त भय निवसथि हो ।
नहि जनि प्रथम वसन्त तन्त पति सुमरथि हो ॥

भानुनाथ कह धीर, धीर मानस कय हो ।
विसरओ ओ यदुबीर पीर धैरज धय हो ॥

(मिथिला विद्यापीठ दरभङ्गाक हस्तलिखित-
ग्रन्थ— विद्यापतिगीतसंग्रह' सँ ।)

